अष्टम अध्याय

उपसंहार

संस्कृत वाङ्मय में व्याकरण शास्त्र का स्थान सर्वमूर्धन्य है। उसकी गणना वेद के षडङ्गो-शिक्षा-कल्प-व्याकरण-निरूक्त-छन्द एवं ज्योतिष में की गई है तथा उसे वेद का मुख रूप प्रधान अंग माना गया है।

''मुखं व्याकरणं तस्य ज्योतिषं नेत्रमुच्यते''

व्याकरण ज्ञान के बिना वेद-वेदान्त, स्मृति-पुराण, इतिहास, काव्य आदि किसी भी शास्त्रान्तर का ज्ञान होना असम्भव है।

भास्कराचार्य जी ने कहाँ भी है-

यो वेद वेदवदनं सदनं हि सम्यग
ब्राह्मया: स वेदमपि वेद किमनन्य शास्त्रम्।
यस्मादत: प्रथममेतदधीत्य विद्वान
शास्त्रान्तरस्य भवति श्रवणेऽधिकारी।

अत: कहा गया है कि चाहे किसी अन्य शास्त्र का अध्ययन किया जावें अथवा नहीं, व्याकरण का अध्ययन अवश्य करना चाहिए, क्योंकि व्याकरण ज्ञान के बिना शब्दों का उचित प्रयोग होना असम्भव है। साथ ही उचित प्रयोग न होने पर अर्थ का अनर्थ हो जाता है।

* महाकवि भट्टि का महाकाव्य 'रावणवध' या 'भट्टिकाव्य के नाम से प्रचलित है। महाकाव्य क्षेत्र में महाकवि भारवि के बाद महाकवि भट्टि का नाम स्मरणीय है। व्याकरणशास्त्र की कठिनाइयों को दूर करते हुए, काव्य के द्वारा व्याकरण सिखाने का प्रयत्न करने का श्रेय भट्टि को है। इसमें उन्हें पर्याप्त सफलता प्राप्त हुई है। भट्टि का लक्ष्य यद्यपि व्याकरण शिक्षण है और उसने व्याकरण की क्रमिक शिक्षा दी है, तथापि उसमें कवित्व और भाव पक्ष की न्यूनता नहीं है। व्याकरण-मूलक काव्यशैली की एक नवीन विधा को जन्म देने का श्रेय भट्टि को है। महाकवि भट्टि में वर्णन की अपूर्व क्षमता है। व्याकरण जैसे विषय को लेते हुए प्रबंध काव्य की रचना का सफलतापूर्वक निर्वाह कर पाना भट्टि के लिए ही संभव है।

* महाकवि भट्टि के इस सफलतम प्रयास को और अधिक प्रशस्त करने के लिए तथा विद्यार्थियों हेतु उपयोगी बनाने के लिए मैंने अपने शोध-प्रबन्ध के लिए 'भट्टिकाव्यम्' ग्रंथ चुना।

जिसमें व्याकरण के समास, सन्धि, कारक, उपसर्ग, कृत एवं तद्धित प्रत्ययादि का प्रचुर प्रयोग किया गया है। यह शोध-प्रबन्ध आठ अध्यायों में विभक्त है।

प्रारम्भ में विषय की सीमा, प्रयोजन, मौलिकता और उपादेयता के प्रदर्शित करने हेतु आमुख दिया गया है।

* शोध प्रबन्ध के प्रत्येक अध्याय के विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्षों का विवरण इस प्रकार है-

प्रथम अध्याय में महाकवि 'भट्टि' के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का परिचय दिया गया है। 'भट्टिकाव्यम्' महाकवि 'भट्टि' की उपलब्ध एकमात्र कृति है। इस अध्याय में महाकवि भट्टि ने जीवन से संबंधित महत्त्वपूर्ण सूचनाओं क बारे में बताया गया है। 'भट्टिकाव्यम्' की विषय-वस्तु - यह महाकाव्य, रामायण की सम्पूर्ण कथा पर आश्रित 22 सर्गों में है। इस सम्पूर्ण महाकाव्य में 1625/1625 पद्य है। सभी सर्गों का वर्णन यहाँ किया गया है। श्री राम जन्म से आरम्भ करके राज्याभिषेक तक की कथा इसमें दी गयी है। इस काव्य को स्वरूप की दृष्टि से चार काण्ड़ों या भागों में विभक्त किया है-

1. प्रकीर्णकाण्ड (प्रथम से पंचम सर्ग)
2. अधिकार काण्ड़ (षष्ठ से नवम् सर्ग)
3. प्रसन्नकाण्ड़ (दशम से त्रयोदश सर्ग)
4. तिङन्तकाण्ड (चतुर्दश से)

इन सभी काण्डों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। सभी काण्ड़ों में भिन्न-भिन्न व्याकरणिक तत्वों का समावेश किया गया है। कृत, तद्धित, समास, संधि कारको के माध्यम से व्याकरण की महत्ता को प्रकट किया गया है। मीमांसादि-शास्त्रीय शब्दबोध परिचयपूर्वक व्याकरण शास्त्रीय शब्दबोध के प्रक्रिया प्रदर्शन का वर्णन किया गया है।

द्वितीय अध्याय में भट्टिकाव्यम् गत कृत् प्रत्ययान्त शब्दों का अर्थ निर्धारण व्युत्पत्ति एवं कृत् प्रत्ययों का अनुबंध-विमर्श किया गया है। कृत् प्रत्यय धातु के साथ जुड़ होते है। ये मुख्यत: दो प्रकार के होते है- कृत् एवं कृत्य। कृत्य प्रत्यय सात होते हैं- तव्य, तव्यत्, अनीयर्, केलिमर्, यत्, ण्यत् और क्यप्।

कवि ने अनेकानेक अर्थों में कृत् प्रत्ययों का प्रयोग किया है। अच्, णिनि, क, अण्, ण्वुल्, तृच् इत्यादि प्रत्ययों का विधान कर्त्ता अर्थ में किया है। ल्युट्, घञ्, अप्, तुमुन्, क्त्वा आदि प्रत्ययों का प्रयोग भाव अर्थ में किया गया है। कृत्संज्ञक प्रत्यय मूलत: भाव वाच्य एवं कर्मवाच्य में प्रयुक्त होते है। कवि ने कृत् प्रत्ययों के माध्यम से शब्दों में भाषागत सौन्दर्य की सृष्टि की है। कृत् प्रत्ययों के साथ-साथ कवि ने उणादि प्रत्ययों का भी प्रयोग किया है। वर्तमान काल में संज्ञा के वाच्य होने पर

उण् आदि प्रत्यय बहुल प्रकार से होते है। पाणिनि ने इत् को ही अनुबन्ध कहा है अर्थात् जिसकी इत्संज्ञा होती है। उसी को अनुबन्ध कहते है।

तृतीय अध्याय में भट्टिकाव्यम् में कृत् प्रत्ययान्त शब्दों में प्रयुक्त, सेट्, वेट्, अनिट्, **सौत्र,** आत्मनेपदी, परस्मैपदी, सकर्मक अकर्मक धातुओं का निर्णय किया गया है। धातु से जिन प्रत्ययों को जोड़कर संज्ञा, विशेषण अथवा अव्यय शब्द बनाए जाते है उनको कृत् प्रत्यय कहते है। कृत् प्रत्यय से जुड़कर बना हुआ शब्द कृदन्त कहलाता है। कृत् प्रत्ययों और तिङ् प्रत्ययों में मुख्य अन्तर यही है कि तिङ् प्रत्यय जुड़ने से सदा क्रिया रूप बनते है किन्तु कत् प्रत्यय जुड़कर संज्ञा, विशेषण या अव्यय शब्द बनते है।

चतुर्थ अध्याय में भट्टिकाव्यम् में प्रयुक्त तिङ्न्त क्रियापदों का वर्णन किया गया है। तिङ् प्रत्यय भाव, कर्म और कर्त्ता अर्थ में प्रयुक्त होते है। सकर्मक धातु से कर्त्ता तथा कर्म में एवं अकर्मक धातु से कर्त्ता तथा भाव में आत्मनेपद तथा परस्मैपद दोनों पदों के तिङ् प्रत्यय होते है। धातु से तिङ् प्रत्यय जोड़कर क्रिया पद बनाए जाते है जिन धातुओं को इट् का आगम होता है वे सेट् तथा जिनमें इट् का आगम नहीं होता है वे अनिट् धातुएँ एवं जो विकल्प से इट् को ग्रहण करती है वे वेट् कहलाती है। **महिङ्, पयस्, दोलण्** आदि धातुएँ सौत्र कहलाती है।

जब कर्त्ता कोई भी क्रिया स्वयं के लिए करता है तो वह आत्मनेपद तथा जब क्रिया कर्त्ता के द्वारा अन्य के लिए की जाती ह तो वह परस्मैपद का प्रयोग होता है। जिसमें आत्मनेपद व परस्मैपद दोनों का विधान किया जाता है ऐसी धातुएँ उभयपदी कहलाती है। जिन धातुओं का फल व व्यापार एक निष्ठ अर्थात् एक में ही पाये उसे अकर्मक तथा जिन धातुओं का फल व व्यापार एक निष्ठ न हो अर्थात् फल कर्म एवं व्यापार कर्त्ता में रहता है उसे सकर्मक कहते है। तिङ्न्त क्रियापदों के साथ-साथ कवि ने सन्नन्त, णिजन्त, यङ्न्त तथा नाम धातुओं का भी प्रयोग किया है, जिससे धातु के अर्थ में वैशिष्ट्य आ जाता है।

पंचम अध्याय में भट्टिकाव्यम् में प्रयुक्त तद्धित प्रत्ययों की व्युत्पत्ति, अर्थ निर्धारण एवं अनुबंध-विमर्श किया गया है। सुबन्त पद से (एवं स्वार्थिक प्रत्यय होने पर प्रातिपादिक से) जो प्रत्यय 'अपत्य' आदि अर्थों को कहने के लिए विधान किए गये है उन्हें तद्धित कहते है।

'तेभ्यः प्रयोगेभ्यः हिताः इति तद्धिताः।' कवि ने स्वार्थ में तसिल्, च्वि, कन्, दा, अण्, इष्ठन्, त्रल् तथा भाव अर्थ में ष्यञ् एवं तल् प्रत्ययों का प्रयोग किया है। इन प्रत्ययों का मुख्य प्रयोजन ही संज्ञा के अर्थ में विस्तार और वैशिष्ट्य लाना है। तद्धित नामधय प्रत्ययों का विधान ङ्यन्त आबन्त

और प्रातिपदिक इन त्रिविधि प्रकृतियों से होता है। स्वार्थिक प्रत्ययान्त शब्दों का अर्थ प्रकृति से ही निर्गत होता है। प्रत्यय तो केवल उसका द्योतन मात्र करते है। अस्वार्थिक तद्धित वे है जिनका विधान सुबन्त प्रकृति से अर्थ विशेष में तथा अत्यन्त स्वार्थिक प्रत्यय सुबन्त प्रकृति से न होकर प्रातिपादिक से होते है। अनुबन्ध वे होते है जो प्रकृति-प्रत्यय के साथ लगकर गुण, वृद्धि, आगम, आदेश इत्यादि कार्यों को निर्धारित करते है। अनुबन्ध व्याकरण तन्त्र का बीज रूप है। जिस प्रकार विशेष शक्ति अनन्त अद्भुत् जगत् को दिखाती है उसी प्रकार अनुबन्ध भी एक शब्द ब्रह्म को नाना रूप में दिखाता है।

षष्ठ अध्याय में भट्टिकाव्यम् में प्रयुक्त समस्त पदों का वर्गीकरण एवं उनका लौकिका·लौकिक विग्रह प्रदर्शन पूर्वक व्युत्पत्ति की है। कवि ने अल्प व दीर्घ समास युक्त पदों का प्रयोग किया है।

उनके काव्य में समासों का इस प्रकार प्रयोग हुआ है कि उसमें अर्थ गाम्भीर्य एवं भाव प्रौढ़ता स्पष्टतः झलकती है। कवि ने सभी समासों का प्रयाग किया है जिनमें तत्पुरुष, बहुब्रीहि समास का प्राधान्य है। छोटे-छोटे समासों के माध्यम से समाहार शक्ति का प्रयोग किया है। 'भट्टिकाव्यम्' के श्लोकों में समासों का पाण्डित्य प्रदर्शन के उद्देश्य से न करके भाव वैशिष्ट्य की दृष्टि से उपयुक्त स्थानों पर उचित समासों का प्रयोग किया है।

सप्तम अध्याय में भट्टिकाव्यम् में कारक-विभक्ति निर्णय व सन्धि पर विचार किया गया है। कवि ने कर्त्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान व अधिकरण कारकों का प्रयोग किया है। प्रथमा, द्वितीया, तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, सप्तमी आदि विभक्तियों का प्रयोग भी किया है। सन्धियों का प्रयोग करके कवि ने काव्य को सरल एवं बोधगम्य बनाया है। दीर्घ एवं कठिन सन्धियों का अत्यधिक प्रयोग नहीं किया गया है।

इस प्रकार भट्टिकाव्यम् का व्याकरणात्मक दृष्टि से परिशलनात्मक अध्ययन करने से इस शोध-प्रबन्ध की निम्नलिखित **उपलब्धियाँ** इस प्रकार है-

1. संस्कृत वाङ्मय में तद्धित प्रत्यय, कृत् प्रत्यय, कारक, सन्धि, समास एवं लिङ्गादि का महत्त्व प्रतिपादित करना।
2. संस्कृत में व्याकरणात्मक दृष्टि से कवियों की कृत्तियों का अध्ययनाध्यापन एवं अनुसंधान करने की प्रवृत्ति का विकास करना।
3. संस्कृत वाङ्मय पर व्याकरणात्मक दृष्टि से भी अनेक प्रकार के शोध कार्य हो सकते है। इस भावना का गवेषकों में विकास करना।

4. संस्कृत वाङ्मय गत शब्दों का व्याकरणात्मक दृष्टि से विश्लेषण करने का योग्यता का विकास करना।
5. 'भट्टिकाव्यम्' में व्याकरण के प्रमुख अङ्ग कृत्, तद्धित, समास, सुबन्त, तिङून्त कारक एवं लिङ्गादि के प्रयोग प्रदर्शन द्वारा संस्कृत व्याकरण के प्रति छात्रों में रूचि उत्पन्न करना।
6. संस्कृत वाङ्मय गत शब्दों का व्याकरणात्मक दृष्टि से विश्लेषण करने की योग्यता का विकास करना।